दादूपंथ : परम्परा और इतिहास

डॉ. दयाराम स्वामी
बी.एससी. (आनर्स), एम.बी.बी.एस. एम.डी. (स्वर्णपदक)
वरिष्ठ मानसिक रोग विशेषज्ञ एवं पूर्व प्रमुख विशेषज्ञ
एस.एम.एस. हॉस्पिटल, जयपुर

दादू के जन्म तथा जाति के बारे में इस समय तक जो कुछ विभिन्न लेखकों द्वारा लिखा गया है, वह एक दूसरे से पर्याप्त भिन्नता रखता है। इसका प्रधान कारण है- लेखकों को अति न्यून जानकारी। अधिकांश तो अंग्रेज लेखकों द्वारा लिखित है। उनकी जानकारी में सबसे पहली कठिनाई थी भाषा की तथा दूसरी कठिनाई थी उस विषय को जानने की। अंग्रेज होने से यहाँ के जनमानस के साथ उनका घनिष्ठ परिचय नहीं हो सका। फिर सामग्री जिनके पास मिल सकती थी, उन तक वे पहुँचे भी नहीं। इससे उनको जो कुछ थोड़ी बहुत जानकारी किन्हीं सुने सुनाये व्यक्तियों से प्राप्त हुई, उसी के आधार पर उन्होंने इस विषय पर अपना मत प्रकट किया।

अंग्रेज लेखकों के लेखन में यह कमी सब तरफ है, क्योंकि पीछे लिखने वालों ने अपने पूर्व लिखने वालों का आश्रय लिया। इस तरह डॉ. विल्सन, ब्यूल्हर, टयोसी, ग्रियर्सन, जी.आर. सिडन्स, क्रुक आदि का विवेचन भ्रांतिरहित नहीं है। अंग्रेजी के बाद हिन्दी लेखकों की बात करें तो उनमें भी अनुसंधान की कमी के कारण वैसे ही दोष आ गये हैं, जैसे अंग्रेजी लेखकों में है। अनुसंधान से लिखने वालों में तीन व्यक्ति शेष रह जाते हैं- डॉ. ताराचंद गोयल, चन्द्रिकाप्रसाद त्रिपाठी, आचार्य क्षितिमोहन सेन। इन तीनों में त्रिपाठी जी का वही मत है जो सम्प्रदाय में अब तक परम्परा से मान्य चला आ रहा है। आचार्य सेन तथा गोयल महोदय का मत इससे भिन्न है।

आविर्भाव- भारतवर्ष के संदर्भ में मध्यकाल को संस्कृतियों का सन्धिकाल भी कहा जाता है। उसी काल में महान् विचारक और परमसाधक महात्मा दादू ने लोक कल्याण हेतु अवतार ग्रहण किया। कहते हैं, प्रभु आज्ञा से सनक ऋषि ही भारत भूमि पर दादू के रूप में अवतरित हुए थे।

दादू का अवतरण स्थान अहमदाबाद माना गया है। सम्बत् 1601 फाल्गुन शुक्ला अष्टमी को साबरमती नदी में कमल-दल में प्रवाहित होते हुए प्रातः काल नागर ब्राह्मण लोदीरामजी को वे प्रभु आज्ञा से प्राप्त हुए थे। लोदीराम जी निःसन्तान थे तथा प्रतिदिन प्रभु से पुत्र प्राप्ति की याचना करते थे। उन्होंने एवं उनकी धर्मपरायण पत्नी ने अति प्यार दुलार से दादू का पालनपोषण किया। ग्यारह वर्ष की आयु में एक दिन संध्या समय कांकरिया तालाब पर बालक दादू अन्य बालकों के संग खेल रहे थे, तभी परमात्मा वृद्धरूप धारण कर पधारे। दादू ने वृद्ध भगवान् को नमन कर एक पैसा भेंट स्वरूप अर्पित किया। वृद्ध ने कहा कि जो वस्तु सर्वप्रथम मिले, ले आओ। दादू को सर्वप्रथम एक पान की दुकान मिली। अतः वे एक पैसे का पान लेकर आये तथा वृद्ध (बूड़ण भगवान्) को अर्पित किया। वृद्ध ने दादू को उपदेश दिया तथा जगत् कल्याण के लक्ष्य को याद दिलाया, जिस हेतु उनका अवतरण हुआ था। दादू उसी समय गृह त्याग कर आत्म-चिंतन हेतु निकल पड़े।

अहमदाबाद से चल कर आबू होते हुए पुष्कर के नाग पहाड़ की श्रृंखला में एक पहाड़ी पर स्थित एक ककेड़े के पेड़ के नीचे साधना करने लगे। छः वर्ष तक कठोर साधना द्वारा आत्मानुभव प्राप्त किया। फिर वे सांभर में सम्वत् 1619 से 1632 तक (13 वर्ष) विराजमान रहे। यहाँ उन्होंने अपनी अनुभूति के अनुसार उपदेश देना प्रारम्भ कर दिया। दादू प्राणीमात्र में प्रेम, सत्य, अहिंसा, निर्वैरता व दया भाव को स्वाभाविक प्रवृत्ति मानते थे। अतः कालान्तर में 'दादूदयाल' नाम से प्रसिद्ध हुए। उनका यह दृढ़ निश्चय था कि ईश्वरीय सृष्टि में जाति-धर्म के भेदभाव, ऊँच-नीच व स्पृश्यास्पृश्य का कोई स्थान नहीं है। दादू निर्गुण भक्तिधारा के उपासक थे।

उनके इन विचारों का कुछ समय तक दोनों धर्मों ने ही विरोध किया तथा उन्हें कई तरह के कष्ट पहुंचाये, पर उनके धैर्य तथा समत्वभावना का धीरे-धीरे जनमानस पर प्रभाव होने लगा तथा दोनों ही धर्मानुयायी दादू में श्रद्धा रखने लगे। साँभर में लगभग तेरह-चौदह वर्ष के काल में आपके अनेकों शिष्य बने।

बीकानेर राजपरिवार के भीमराज जो बड़े सुन्दरदास के नाम से विख्यात हुए, वे दादूपंथी नागा सम्प्रदाय के प्रथम पुरुष माने जाते हैं और सर्वप्रथम दादू महाराज के शिष्य बने।

सम्वत् 1632 से 1647 (15 वर्ष) तक दादू ने आमेर में निवास किया। जिस गुफा में वे साधना करते थे, वह आज भी आमेर के दादू मंदिर के नीचे सुरक्षित व संरक्षित है।

आमेर में राजा मानसिंह के पिता महाराजा भगवंतदास राज्य करते थे। वे दादू के परम श्रद्धावान शिष्य थे। आमेर निवास के समय तक दादू की कीर्ति दूर-दूर तक फैल चुकी थी। सीकरी में बादशाह अकबर ने भी उनकी प्रशंसा सुनी। बादशाह अकबर ने महाराज भगवंतदास से दादू को सीकरी लाने का आग्रह कर दर्शन की इच्छा प्रकट की। महाराज सम्वत् 1642 में फतेहपुर सीकरी पधारे। तथा 40 दिन सत्संग किया। अकबर दादू महाराज के विचारों से बहुत प्रभावित हुए और उन्हीं के उपदेश के प्रभाव से ही गौहत्या बन्द करवा दी थी। अकबर ने दादू के विषय में कहा :-

दादू नूर अल्लाह है, दादू नूर खुदाय।
दादू मेरा पीव है, कहे अकबर शाह।।

सीकरी से लौट कर दादू ने विचारों के प्रचार के लिए विभिन्न क्षेत्रों का भ्रमण किया। इस काल में वे अपने पहले साधनास्थल ग्राम करडाला में पुनः सम्वत् 1650 में पधारे तथा रहे। तत्पश्चात् साँभर से नरायणा के प्रशासक खंगारोत उन्हें नरायणा ले आये। सम्वत् 1657 से 1660 तक वे यहीं रहे। आपकी सरस अमृतमयी वाणी का ऐसा प्रभाव पड़ता था कि सैकड़ों की संख्या में उच्चकोटि के विचारक भी आपके शिष्य बने।

दादू ने अपने विचारों को साखी और शब्दों में भी गुम्फित किया, जो ''दादूवाणी'' में संग्रहित हैं। इसमें 37 प्रकरण साखी भाग के हैं, पदभाग में 27 राग और रागनियों में 445 पद हैं।

आत्मचिन्तन की प्रवृत्ति वाले साधकों को दादूवाणी के पठन-पाठन से परम शांति का अनुभव होता है। दादू ने वर्गभेद के बिना सभी को अपना शिष्य बनाया। उनके प्रसिद्ध बावन शिष्यों में रज्जब, बखना, वाजिद, नागर, निजाम, गरीबदास, मस्कीनदास, बड़े सुन्दरदास, छोटे सुन्दरदास, पं. जगजीवन, टीला इत्यादि प्रमुख हैं।

ज्ञान, भक्ति व वैराग्य की मौलिक धारा का यह महान निर्गुण संत 58 वर्ष 2 मास और 15 दिन की अवस्था पूर्ण कर संवत् 1660 ज्येष्ठ कृष्णाष्टमी शनिवार को ब्रह्मलीन हो गये। दादू महाराज की देह को भैराणा धाम लाया गया, दाह-संस्कार पर विचार-विमर्श चल ही रहा था, तभी दादू महाराज की देह 'सत्यराम'

कहते हुए भैराणा पर्वत की गुफा में अन्तर्ध्यान होकर समाहित हो गई। जनश्रुति है कि, 'दादू और कबीर की काया भई कपूर'। इस प्रकार सगुण देह निर्गुण में समाहित हो गई।

उपदेश - दादू ने अपनी साधना में समत्व योग को सिद्ध किया था। शुद्ध चैतन्य ही उनका उपास्य था। आत्म निरीक्षण द्वारा ही उन्हें आत्मानुभूति की प्राप्ति हुई थी। आत्मधर्म व आत्मसंबंध के सिवाय अन्य बातें उनकी दृष्टि में गौण थीं। दादू ने इसीलिये लोकाचार को महत्त्व नहीं दिया। उन्होंने सत्य और शाश्वत को ही धर्म माना, उसी का उपदेश किया। जाति, वर्ण और धर्म जिससे भेदभाव की वृद्धि के सिवाय और कोई फल नहीं निकलता, बचने की सलाह दी।

दादू और कबीर की विचारधारा और सिद्धान्तों में अतिशय साम्य दिखाई देता है। निर्गुण ब्रह्म ही दोनों के उपास्य हैं। बाह्याडम्बर का परित्याग, हृदयप्रदेश में उपास्य की उपासना, जाति-पाँति के भेद का परित्याग, सबमें एकात्मदर्शन आदि कबीर-सिद्धान्तों का दादू ने भी पूर्णतया अनुमोदन किया-

जे था कन्त कबीर का सोई वर वरिहूँ।
मनसा वाचा कर्मणा मैं औरन करिहूँ।।
सांचा शब्द कबीर का मीठा लागे मोहि।
दादू सुनता परम सुख केता आनंद होई ।।

संत दादू ने नामजप की महिमा अपनी अमृतवाणी में बतायी है। साधक वर्ग को सर्वप्रथम मन के स्थैर्य के लिए नामजप का आश्रय लेना पड़ता है। जप के लिए अनेक मंत्र साधना में निर्दिष्ट हैं, इनमें दादू ने 'रामनाम मंत्र' को अग्रणी माना है और अपनी वाणी में इसकी अतीव महत्ता प्रदर्शित की है। वे कहते हैं -

दुख दरिया संसार है, सुख का सागर राम।
सुख सागर चल जाइये, दादू तजि बे काम।।

मेरे संशा को नहीं, जीवण-मरण को राम।
सुपने ही जिन वीसरे, मुख हिरदे हरिनाम ।।

दादू राम नाम निज औषधि, काटै कोटि विकार।
विषम व्याधि ते उबरे, काया कंचन सार।।

दादू सब ही वेद पुरान पढ़ि, नटि नाम निरधार।
सब कुछ इनहीं मांहि है, क्या करिये विस्तार।।

दादू अलिफ एक अल्लाह का, ने पढ़ जाणै कोय।
कुरान कतेबा इल्म सब, पढ़ि कर पाकी होय ।।

हिरदै राम रहे जा जन के, ताको ऊरा कौण कहै।
अठ सिद्धि नौ निधि ताके, आगे सनमुख सदा रहै।।

बंदत तीनों लोक बापुरा, कैसे दरस लहै।
नाँव निसान सकल जग, ऊपर दादू देखत है।

निर्गुणोपासना में मनःस्थैर्य की अपेक्षा होती है और यह मनः स्थैर्य बिना किसी अवलम्बन के हो नहीं सकता। इसके लिये तो किसी न किसी उपास्य के स्मरण की आवश्यकता रहती है।

बिन अवलम्बन क्यों रहें, मन चंचल चलि जाइ।
स्थिर मनवा तब ही रहैं, सुमिरन सेती लाइ ।

निर्गुणोपासना में नाम रट से अधिक महत्त्वपूर्ण कुछ नहीं होता, वह नाम चाहे ओंकार हो, राम हो या और कोई हो। क्योंकि नाम सुमिरन द्वारा सहज ही भगवत् प्राप्ति संभव है। यह प्रभु प्राप्ति का सीधा एवं सरल माध्यम है। जैसा कि निम्न साखियों में कहा गया है-

दादू नीका राम है, तीन लोक तत सार।
रात दिवस रटबो करै, रे मन इहै विचार ।।

दादू सिरजनहार के, केते नाम अनन्त।
चित आवै सौ लीजिये, यों साधु सुमिरै सन्त ।।

स्मारक

दादूजी की स्मृति में कोई विशेष स्थान नहीं बनाया गया है। कारण कि वे इस प्रकार की प्रथाओं को अनुपाय समझते थे। उन्होंने जहाँ अधिक समय व्यतीत किया था, वे जगहें ही आज उनके स्मारक हैं। मुख्य स्थान कल्याणपुर (करडाला) है। जहाँ सबसे पहले उन्होंने लम्बे समय तक साधना की। उस डूंगरी पर जहाँ महाराज ने निवास किया था, भजन-शिला है। आज भी भक्तजन उसको पावन मानकर उसमें श्रद्धा रखते हैं। पहाड़ी की तलहटी में बाद में एक स्थान बनवाया गया है, जिसको 'दादूद्वारा' कहते हैं।

वाणी

दादू महाराज के स्मारक तो स्थावर रूप के हैं, उनका वास्तविक व पवित्र स्मारक उनकी 'अनुभववाणी' है। यह समय- समय पर दादू द्वारा जिज्ञासुओं को उपदेश रूप में कही गई बातों और उनके सिद्धांतों को सम्यक् प्रकार से व्यक्त करने के लिए स्वतः प्रवाहित हुई पद्यधारा का संग्रह है जिसका संकलन उनके शिष्यों ने किया है।

वाणी का सामान्य अर्थ तो कथन है, पर यह कथन केवल युक्ति तथा प्रचलित पुरातन सिद्धांतों पर ही आधारित नहीं है, किंतु स्वकीय अनुभूति के आधार पर है। अतः संत-साधकों का अनुभूतिकथन ही वाणी शब्द से व्यवहृत हुआ है।

दादूवाणी के दो भाग हैं- एक अंगभाग, दूसरा रागभाग। अंगभाग में भिन्न-भिन्न विषयों पर सैंतीस अंग हैं, प्रत्येक अंग में विषय विवेचन के अनुरूप छब्बीस सौ से अधिक साखियाँ हैं। दूसरा रागभाग है, इसमें सत्ताइस राग-रागनियों में चार सौ पैंतालीस पदों का संग्रह है।

परम्परा

दादू महाराज जब साँभर में थे तभी से शिष्य परम्परा आरम्भ हो गई थी। वैसे उपदेश लेकर शिष्यत्व मानने वाले व्यक्तियों की संख्या तो हजारों होगी, जैसा कि जनगोपाल कृत 'जन्मलीला' व माधोदास कृत 'संतगुणसागर' में उनका वर्णन है। सभी जाति-वर्गों के व्यक्तियों ने महाराज का सत्संग किया था। उस समय के कई राजा-रइसों की दादू में पूरी श्रद्धा थी, फिर साधारण जनता का तो कहना ही क्या था। साँभर, आमेर, नरेना आदि स्थानों में जैसे-जैसे शिष्यों

ने उपदेश ग्रहण किया, उनकी नामावली लिखी हुई है। शिष्य प्रशिष्यों का स्वतंत्र विवरण राधोदास की 'भक्तमाल' में विशेषरूप से किया गया हैं। हृदयराम व लालदास कृत दो शिष्य नामावलियाँ भी बनी हुई हैं, महाराज के एक सौ बावन प्रधान शिष्य थे। कथा प्रचलित है कि इनमें सौ तो ऐसे वीतरागी थे जिन्होंने व्यवहार सत्ता का प्रायः त्याग ही कर दिया था, वे अनवरत आत्मचिंतन में ही संलग्न रहते थे। इन्होंने न तो अपने पीछे कोई शिष्य बनाया, ना ही वे किसी स्थान विशेष पर स्थायी रहे। वे एकांतवास करने वाले थे, इसलिये इनके नाम तो गिनाये हैं, पर आगे कोई श्रृंखला न रहने से इनके बाद इनकी कोई परम्परा जारी नहीं रही। बाकी बावन में से अधिकांश की परम्परा जारी रही, उन्होंने भजन तथा व्यवहार दोनों ही बातें अपनाई।

इन्हीं शिष्यों की परम्परा को लेकर बावन थाम्बे बने। आज का सम्पूर्ण दादूपंथी सम्प्रदाय इन्हीं बावन थाम्बों की प्रणाली से बना हुआ है। इनमें से कुछ नाम ऐसे हैं जिनकी परम्परा नहीं बढ़ी। कुछ नाम ऐसे हैं जिनकी परम्परा कई पीढियाँ चलकर समाप्त हो गई। बावन में से पच्चीस छब्बीस थाम्बे अब भी ऐसे हैं जिनके महंत और साधु दोनों हैं। महाराज दादू का सम्प्रदाय चलाने या बनाने का उद्देश्य नहीं था, वे तो जनकल्याण भावना से ही कार्यक्षेत्र में उतरे थे। उनके शिष्यों में अधिकांश ऐसे थे जो गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने के बाद दादू के शिष्य हुये थे। कुछ ऐसे थे जिन्होंने गृहस्थाश्रम में प्रवेश नहीं किया।

महाराज के ब्रह्मलीन होने पर सब शिष्य नरेना में एकत्र हुये। दादू महाराज की गरीबदास पर कुछ विशेष कृपा थी। सबने मिलकर निश्चय किया कि महाराज तो स्वर्ग सिधार गये हैं। उनका कोई पंथ सम्प्रदाय बनाने का ध्येय यद्यपि नहीं था, फिर भी उनकी स्मृति के लिये तथा उनकी विचार परम्परा को कायम रखने के लिये ऐसा सिलसिला जारी रखना चाहिये जिससे हम लोग वर्ष में एक बार एकत्र हो सकें और आपस में मिल सके। सबने विचार कर गरीबदास को दादू के उत्तराधिकारी पद पर आसीन करने का निश्चय किया और नरेना में दादू महाराज की अवतरण तिथि फाल्गुन सुदी अष्टमी पर मेला आयोजित करने का निर्णय लिया, तभी से यह परम्परा प्रचलित है।

गरीबदास महाराज अत्यंत शांत महात्मा थे। वे गवैये भी बहुत उच्च श्रेणी के थे। योगाभ्यास की शिक्षा भी उन्होंने महाराज से प्राप्त कर ली थी। वे दादू के सिद्धांतों का अनुगमन करते हुये मानव कल्याण का कार्य सम्पन्न करते रहे। गरीबदास का जन्म सम्वत् 1632 में सांभर में हुआ तथा और संवत् 1693 में ब्रह्मलीन हुए।

उनके पश्चात् की शिष्य एवं आचार्य परम्परा इस प्रकार है- 1. गरीबदास महाराज, 2. मसकीनदास महाराज, 3. फकीरदास महाराज, 4. जैतराम महाराज ,5. किशनदेव महाराज, 6. चैनराम महाराज, 7. निर्भयराम महाराज, 8. जीवणदास महाराज, 9. दलेराम महाराज, 10. प्रेमदास महाराज, 11. नारायणदास महाराज,12. उदयराम महाराज, 13. गुलाबदास महाराज, 14. हरजीराम महाराज, 15. दयाराम महाराज, 16. रामलाल महाराज, 17. प्रकाशदेव महाराज, 18. हरिराम महाराज, 19. गोपालदास महाराज। गोपाल दास महाराज का निर्वाण दि 25.11.23 को हुआ। 20. स्वामी ओम प्रकाश दास महाराज (वर्तमान) आचार्य विराजमान है। इस तरह दादूजी महाराज के बाद यह बीसवीं पीढ़ी चल रही है।

दादू समाज में 'सत्यराम' शब्द परस्पर में अभिवादन के लिए प्रयुक्त किया जाता है क्योंकि श्री दादू जी महाराज का 'राम' नाम उपास्य था जो कि त्रिकालावाधित है और सत्य तत्त्व है। संसार में सत्य वस्तु है तो 'राम' ही है, इसके अतिरिक्त जो भी है नाशवान है। निम्न साखी में इसकी अभिव्यक्ति एवं फल का दिग्दर्शन है जो सम्प्रदाय में प्रसिद्ध है :-

'सत्य' शब्द शब्दादि है, 'राम' शब्द रमतीत।
आनन्द तब ही ऊपजै, जब आवै परतीत।।